आचार्य नेमिचंद्र सिद्धांतचक्रवर्ती विरचित

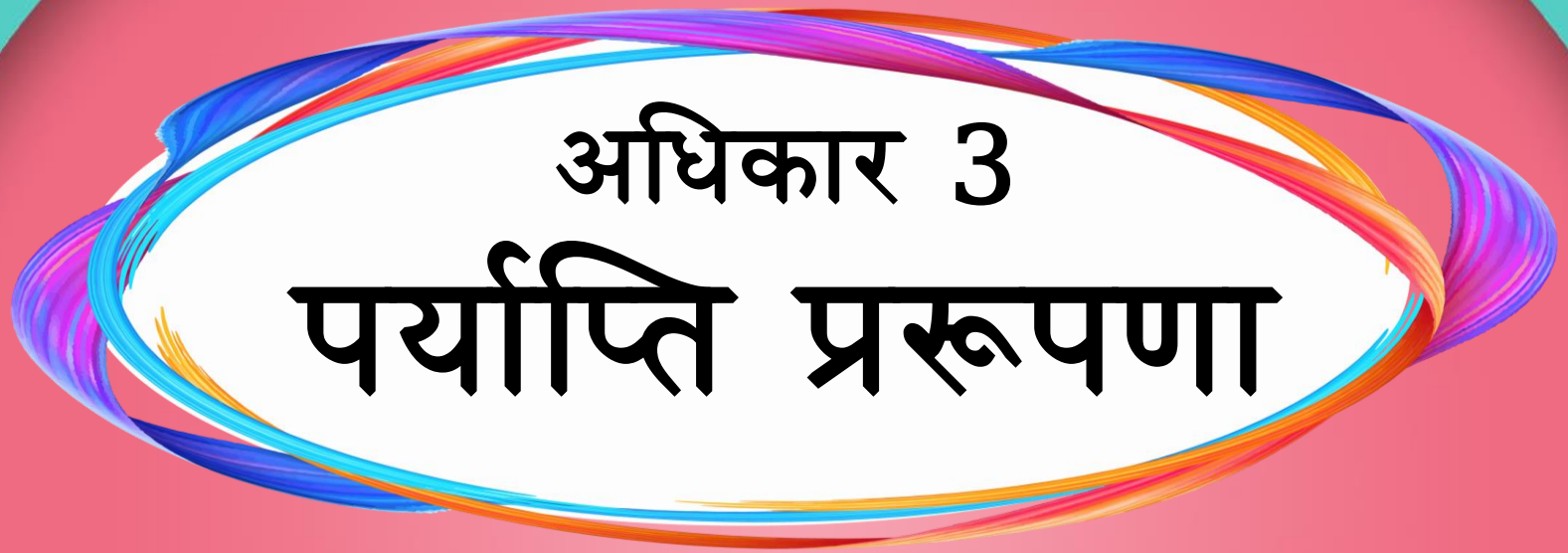

अधिकार 3

पर्याप्ति प्ररूपणा

Presentation Developed By: Smt Sarika Vikas Chhabra

सिद्धं सुद्धं पणमिय, जिणिंदवरणेमिचंदमकलंकं।
गुणरयणभूसणुदयं, जीवस्स परूवणं वोच्छं॥

❖जो सिद्ध, शुद्ध एवं अकलंक हैं एवं

❖जिनके सदा गुणरूपी रत्नों के भूषणों का उदय रहता है,

❖ऐसे श्री जिनेन्द्रवर नेमिचंद्र स्वामी को नमस्कार करके

❖जीव की प्ररूपणा को कहूंगा ।

www.JainKosh.org

जह पुण्णापुण्णाइं, गिह-घड-वत्थादियाइं दव्वाइं।
तह पुण्णिदरा जीवा, पज्जत्तिदरा मुणेयव्वा ॥118॥

❖अर्थ - जिस प्रकार घर, घट, वस्त्र आदिक अचेतन द्रव्य पूर्ण और अपूर्ण दोनों प्रकार के होते हैं उसी प्रकार पर्याप्त और अपर्याप्त नामकर्म के उदय से युक्त जीव भी पूर्ण और अपूर्ण दो प्रकार के होते हैं।

❖जो पूर्ण हैं उनको पर्याप्त और जो अपूर्ण हैं उनको अपर्याप्त कहते हैं ॥118॥

www.JainKosh.org

पर्याप्ति किसे कहते हैं?

गृहीत आहार आदि वर्गणाओं को

खल-रस आदि रूप परिणमाने की

जीव की शक्ति की पूर्णता को

पर्याप्ति कहते हैं ।

www.JainKosh.

आहार-सरीरिंदिय, पज्जत्ती आणपाण-भास-मणो।
चत्तारि पंच छप्पि य, एइंदिय-वियल-सण्णीणं ॥119॥

- अर्थ - आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, भाषा और मन – इस प्रकार पर्याप्ति के छह भेद हैं।
- इनमें से एकेन्द्रिय जीवों के आदि की चार पर्याप्ति,
- विकलेन्द्रिय (द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय) और असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के अन्तिम मन:पर्याप्ति को छोड़कर शेष पाँच पर्याप्ति तथा
- संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों के सभी छहों पर्याप्ति हुआ करती हैं। ॥119॥

www.JainKosh.org

पर्याप्ति के भेद

आहार	शरीर	इन्द्रिय
श्वासोच्छ्वास	भाषा	मन

www.JainKosh.org

आहार पर्याप्ति

औदारिक, वैक्रियिक और आहारक शरीर नामकर्म के उदय के प्रथम समय से लेकर

उन 3 शरीर और 6 पर्याप्ति के परिणमने योग्य पुद्गल स्कंधों को

खल और रसभाग रूप से परिणमाने की

पर्याप्त नामकर्म के उदय की सहायता से उत्पन्न

आत्मा की शक्ति की निष्पत्ति को आहार पर्याप्ति कहते हैं ।

www.JainKosh.org

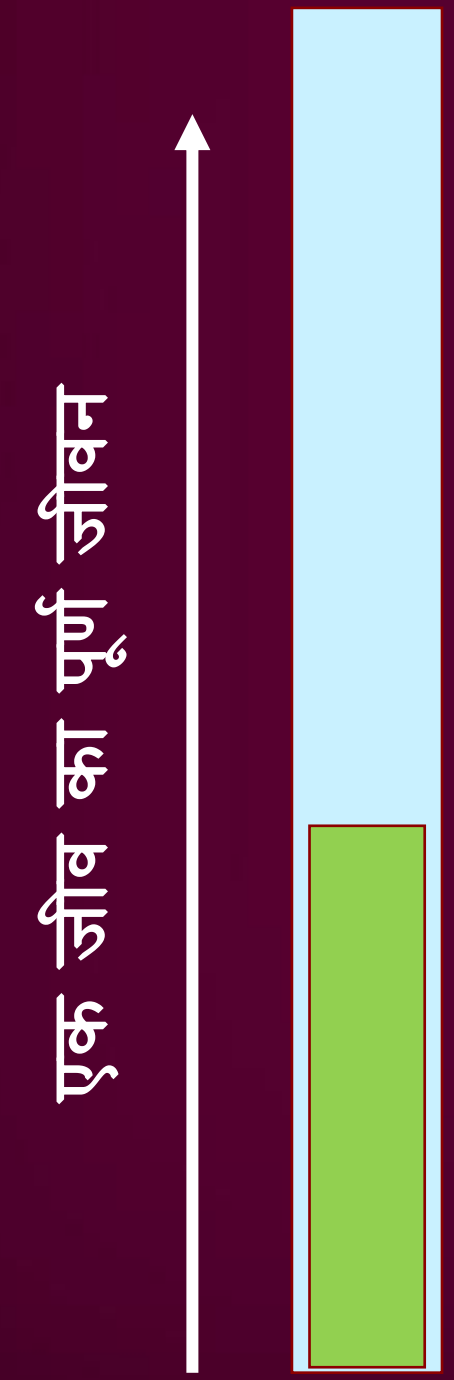

शेष जीवन पर्यंत

आहार वर्गणा को खल और रस भाग में परिणमित करना

प्रारंभिक अंतर्मुहूर्त

आहार वर्गणा को खल और रस भाग में परिणमित करने की शक्ति की निष्पत्ति

www.JainKosh.org

शरीर पर्याप्ति

खल और रस भागरूप से परिणत पुद्गल स्कंधों में से

खल भाग को हड्डी आदि स्थिर अवयव रूप से और

रस भाग को रक्त आदि द्रव अवयव रूप से

परिणमाने की शक्ति की निष्पत्ति को

शरीर पर्याप्ति कहते हैं ।

www.JainKosh.org

इंद्रिय पर्याप्ति

जाति-नामकर्म के उदयानुसार

विवक्षित पुद्गल स्कंधों को

स्पर्शन आदि द्रव्येंद्रिय रूप से

परिणमाने की शक्ति की निष्पत्ति को

इंद्रिय पर्याप्ति कहते हैं ।

www.JainKosh.org

श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति

उच्छ्वास नामकर्म के उदय से युक्त जीव की

आहारवर्गणा के रूप में आये हुए पुद्गल स्कंधों को

उच्छ्वास-निश्वास रूप

परिणमाने की शक्ति की निष्पत्ति को

श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति कहते हैं ।

www.JainKosh.org

भाषा पर्याप्ति

स्वर नामकर्म के उदय से

भाषा-वर्गणा के रूप में आये हुए पुद्गल स्कंधों को

सत्य, असत्य, उभय और अनुभय भाषा के रूप में

परिणमाने की शक्ति की पूर्णता को

भाषा पर्याप्ति कहते हैं ।

www.JainKosh.org

मन पर्याप्ति

मनोवर्गणा के रूप में आये हुए पुद्गलस्कंधों को

अंगोपांग नामकर्म के उदय की सहायता से

द्रव्यमनोरूप से परिणमाने के लिए तथा

उस द्रव्य मन की सहायता से नोइन्द्रियावरण और वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशम विशेष से

भावमन रूप से परिणमन करने की शक्ति की पूर्णता को मन:पर्याप्ति कहते हैं ।

छहों पर्याप्तियों के कार्य

क्रं.	पर्याप्ति	किसको परिणमाना	किस रूप परिणमाने की शक्ति की पूर्णता
1	आहार	आहार वर्गणा	खल (कठोर रूप) रस (पतले रूप)
2	शरीर	,, (खल-रस को)	खल– हड्डी आदि रूप रस– रुधिरादि रूप
3	इन्द्रिय	आहार वर्गणा	द्रव्येन्द्रिय आकार रूप
4	श्वासोच्छ्वास	आहार वर्गणा	श्वासोच्छ्वास रूप
5	भाषा	भाषा वर्गणा	शब्द रूप
6	मनः	मनो वर्गणा	द्रव्यमन रूप

किसकी कितनी पर्याप्ति?

एकेन्द्रिय की	आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास
विकलेन्द्रिय और असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों की	उपर्युक्त 4 एवं भाषा पर्याप्ति
संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों की	छहों पर्याप्ति

www.JainKosh.org

पज्जत्तीपट्ठवणं, जुगवं तु कमेण होदि णिट्ठवणं।
अंतोमुहुत्तकालेणहियकमा तत्तियालावा ॥120॥

❖अर्थ - सम्पूर्ण पर्याप्तियों का आरम्भ तो युगपत् होता है किन्तु उनकी पूर्णता क्रम से होती है।

❖इनका काल यद्यपि पूर्व-पूर्व की अपेक्षा उत्तरोत्तर का कुछ-कुछ अधिक है, तथापि सामान्य की अपेक्षा सबका अन्तर्मुहूर्त मात्र ही काल है ॥120॥

www.JainKosh.org

पर्याप्ति पूर्ण होने का काल

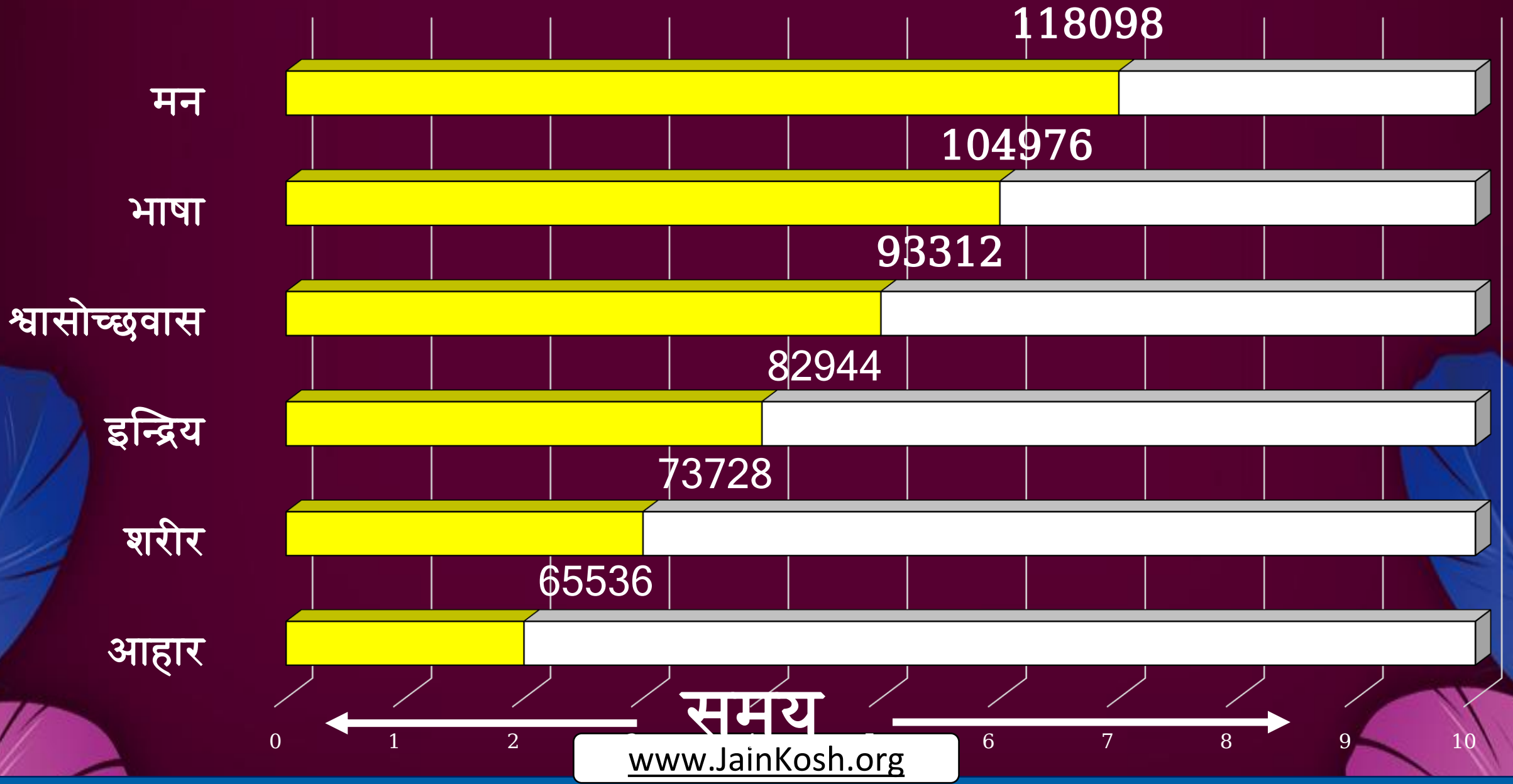

www.JainKosh.org

पर्याप्ति पूर्ण होने का काल – अंक संदृष्टि

माना कि आहार पर्याप्ति पूर्ण होने में 65,536 समय लगते हैं

संख्यात माना 8

शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने का काल =

आहार पर्याप्ति का काल + $\frac{\text{आहार पर्याप्ति का काल}}{\text{संख्यात}}$

$65,536 + \frac{65,536}{8}$

65,536 + 8,192

73,728 समय

पर्याप्ति पूर्ण होने का काल – अंक संदृष्टि

इन्द्रिय पर्याप्ति पूर्ण होने का काल =

शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने का काल + $\frac{\text{शरीर पर्याप्ति का काल}}{\text{संख्यात}}$

$73,728 + \frac{73,728}{8}$

$73,728 + 9,216$

82,944 समय

इसी प्रकार शेष पर्याप्तियों का काल भी निकालना चाहिए।

पर्याप्ति पूर्ण होने का काल – अंक संदृष्टि

❖उदाहरण के अनुसार

उच्छ्वास पर्याप्ति	82,944 + 10,368	= 93,312
भाषा पर्याप्ति	93,312 + 11,664	= 104,976
मन पर्याप्ति	104,976 + 13,122	= 118,098

❖वास्तविक गणित में आगे-आगे की पर्याप्ति पूर्ण होने में अंतर्मुहूर्त का संख्यातवा भाग अधिक-अधिक काल लगता है ।

www.JainKosh.org

पर्याप्ति पूर्ण होने का काल

क्रं.	पर्याप्ति	काल	
1	आहार	अंतर्मुहूर्त	
2	शरीर	अंतर्मुहूर्त	(पूर्व से संख्यात भाग अधिक-अधिक)
3	इन्द्रिय	अंतर्मुहूर्त	
4	श्वासोच्छ्वास	अंतर्मुहूर्त	
5	भाषा	अंतर्मुहूर्त	
6	मन	अंतर्मुहूर्त	

पज्जत्तस्स य उदये, णियणियपज्जत्तिणिट्ठिदो होदि।
जाव सरीरमपुण्णं, णिव्वत्तियपुण्णगो ताव ॥121॥

❖अर्थ - पर्याप्त नामकर्म के उदय से जीव अपनी पर्याप्तियों से पूर्ण होता है तथापि जब तक उसकी शरीर पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती तब तक उसको पर्याप्त नहीं कहते किन्तु निर्वृत्त्यपर्याप्त कहते हैं ॥121॥

❖निर्वृत्त्यपर्याप्त = निर्वृत्ति + अपर्याप्त

www.JainKosh.org

जीव

- अपर्याप्तक
  - निर्वृत्ति-अपर्याप्तक
  - लब्धि-अपर्याप्तक
- पर्याप्तक

सर्व पर्याप्तियों को पूर्ण करने की शक्ति से संपन्न होते हैं।

सर्व पर्याप्तियों को पूर्ण करने की शक्ति से संपन्न नहीं होते हैं।

n.org

निर्वृत्त्यपर्याप्त

निर्वृत्त्यपर्याप्त = निर्वृत्ति + अपर्याप्त

'निर्वृत्ति' अर्थात् शरीर पर्याप्ति की निष्पत्ति से

'अपर्याप्त' अर्थात् अपूर्ण को

निर्वृत्त्यपर्याप्त कहते हैं ।

निर्वृत्त्यपर्याप्त का काल पूर्ण होने के पश्चात् जीव को पर्याप्तक कहते हैं।

www.JainKosh.org

निर्वृत्त्यपर्याप्त का काल - उदाहरण

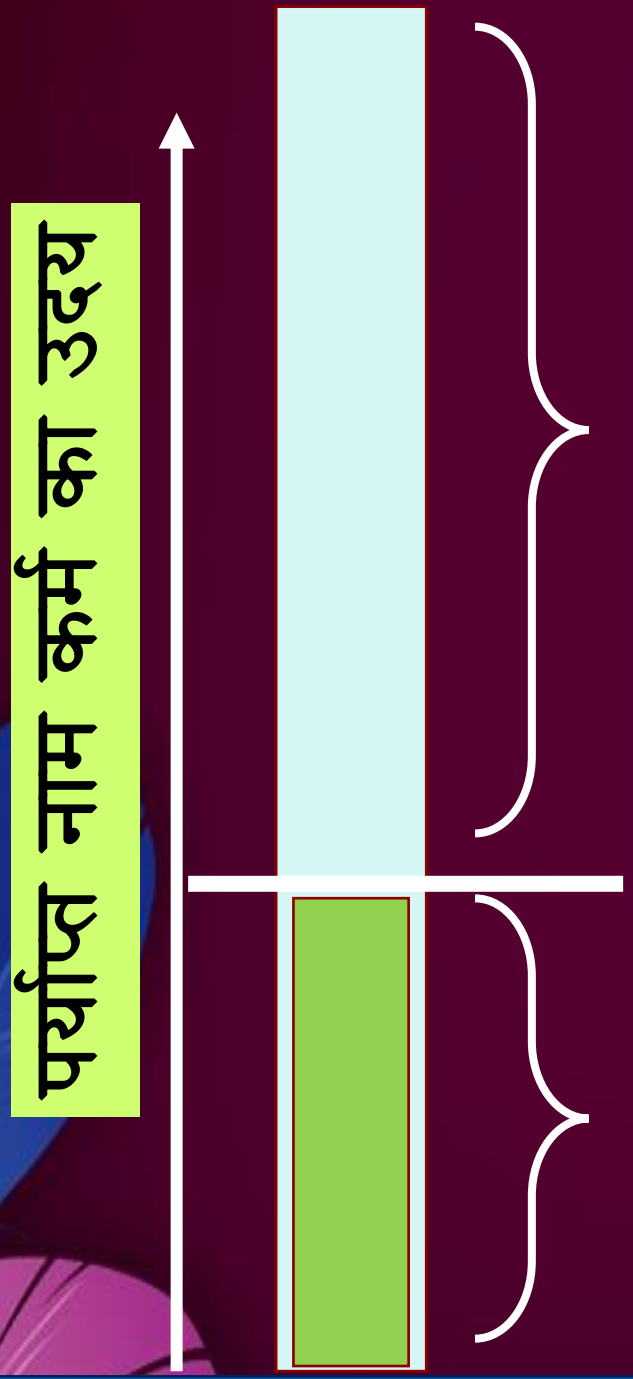

73,728 - शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने का काल

शरीर ग्रहण के प्रथम समय से 73,727 समय तक निर्वृत्ति-अपर्याप्त

www.JainKosh.org

उदये दु अपुण्णस्स य, सगसगपज्जत्तियं ण णिट्ठवदि।
अंतोमुहुत्तमरणं, लद्धिअपज्जत्तगो सो दु ॥122॥

❖अर्थ - अपर्याप्त नामकर्म का उदय होने से जो जीव अपने-अपने योग्य पर्याप्तियों को पूर्ण न करके अन्तर्मुहूर्त काल में ही मरण को प्राप्त हो जाये, उसको लब्ध्यपर्याप्तक कहते हैं ॥122॥

लब्ध्यपर्याप्तक = लब्धि + अपर्याप्तक

www.jainkosh.org

लब्धि-अपर्याप्तक

लब्ध्यपर्याप्तक = लब्धि + अपर्याप्तक

‘लब्धि’ अर्थात् अपनी पर्याप्ति को पूर्ण करने की योग्यता से

‘अपर्याप्त’ अर्थात् अनिष्पन्न (अपूर्ण) को

लब्ध्यपर्याप्तक कहते हैं ।

लब्धि-अपर्याप्तक

लब्धि-अपर्याप्तक जीव अपनी सारी पर्याप्तियों को पूर्ण करना प्रारंभ करता है,

पर एक भी पर्याप्ति पूर्ण नहीं कर पाता ।

श्वास का 18वा भाग मात्र इसकी आयु होती है ।

- ऐसी सबसे छोटी आयु को क्षुद्रभव कहते हैं ।

ऐसे जीव तिर्यंच और मनुष्य गति में ही होते हैं ।

www.JainKosh.org

श्वास

48 Minutes में 3773 श्वास होते हैं,

तो 1 Minute में 78.60 श्वास होते हैं ।

- (3773 / 48) = 78.60

78.6 श्वास 60 सेकंड में होते हैं,

तो 1 श्वास = 0.76 seconds में होता है!!

- (60 / 78.60) = 0.76

लब्ध्यपर्याप्तक जीव का 0.76 seconds में 18 बार जीवन-मरण हो जाता है!!

www.JainKosh.org

पर्याप्त, निर्वृत्त्यपर्याप्तक और लब्ध्यपर्याप्तक में अंतर

	पर्याप्त	निर्वृत्त्यपर्याप्तक	लब्ध्यपर्याप्तक
स्वरूप	शरीर पर्याप्ति पूर्ण हो गई है	शरीर पर्याप्ति पूर्ण नहीं हुई है, लेकिन नियम से पूर्ण होगी	एक भी पर्याप्ति न पूर्ण हुई है, न होगी
कितने समय के लिए	शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने के बाद से आयु पर्यंत	शरीर पर्याप्ति पूर्ण होने के पहले तक	आयुप्रमाण अंतर्मुहूर्त पर्यंत
किस नाम कर्म का उदय	पर्याप्त	पर्याप्त	अपर्याप्त
गुणस्थान	सभी 14	1, 2, 4, 6 और 13	सिर्फ पहला

तिण्णिसया छत्तीसा, छावट्ठिसहस्सगाणि मरणाणि।
अंतोमुहुत्तकाले, तावदिया चेव खुद्दभवा ॥123॥

❖अर्थ - एक अन्तर्मुहूर्त में एक लब्ध्यपर्याप्तक जीव छियासठ हजार तीन सौ छत्तीस बार (66,336) मरण और उतने ही भवों - जन्मों को भी धारण कर सकता है। इन भवों को क्षुद्रभव शब्द से कहा गया है ॥123॥

www.JainKosh.org

सीदी सट्ठी तालं, वियले चउवीस होंति पंचक्खे।
छावट्ठिं च सहस्सा, सयं च बत्तीसमेयक्खे ॥124॥

- अर्थ - विकलेन्द्रियों में द्वीन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक के 80 भव,
- त्रीन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक के 60,
- चतुरिन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक के 40 और
- पंचेन्द्रिय लब्ध्यपर्याप्तक के 24 तथा
- एकेन्द्रियों के 66,132 भवों को धारण कर सकता है, अधिक को नहीं ॥124॥

www.JainKosh.org

पुढविदगागणिमारुद, साहारणथूलसुहुमपत्तेया।
एदेसु अपुण्णेसु य, एक्केक्के बार खं छक्कं ॥125॥

❖अर्थ - स्थूल और सूक्ष्म दोनों ही प्रकार के पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और साधारण एवं प्रत्येक वनस्पति, इस प्रकार सम्पूर्ण ग्यारह प्रकार के लब्ध्यपर्याप्तकों में से प्रत्येक के 6012 निरतंर क्षुद्रभव होते हैं ॥125॥

www.JainKosh.org

जीव	कुल भव	एकेन्द्रियादि के कुल भव
एकेन्द्रिय		66,132
सूक्ष्म पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, साधारण वनस्पति (प्रत्येक के 6012 भव)	5 × 6012 = 30,060	
बादर पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, साधारण वनस्पति (प्रत्येक के 6012 भव)	5 × 6012 = 30,060	
बादर प्रत्येक वनस्पति	6012	
द्वीन्द्रिय	80	80
त्रीन्द्रिय	60	60
चतुरिन्द्रिय	40	40
पंचेन्द्रिय		24
असैनी पंचेन्द्रिय तिर्यंच	8	
सैनी पंचेन्द्रिय तिर्यंच	8	
मनुष्य	8	
कुल क्षुद्रभव		66,336

66336 क्षुद्रभव कितने काल में होते हैं?

एक क्षुद्रभव की आयु	$= \frac{\text{उच्छ्वास}}{18}$
66,336 भवों का समय	$= 66336 \times \frac{\text{उच्छ्वास}}{18}$
	$= 3685\frac{1}{3}$ उच्छ्वास

1 मुहूर्त (48 मिनट) में 3773 उच्छ्वास होते हैं ।

अतः 66336 लगातार क्षुद्रभव एक मुहूर्त से भी कम काल में पूरे हो जाते हैं ।

अधिकतम इतने क्षुद्रभव के पश्चात् पर्याप्त का भव होता ही है। इससे अधिक निरंतर क्षुद्रभव नहीं हो सकते हैं।

पज्जत्तसरीरस्स य, पज्जत्तुदयस्स कायजोगस्स।
जोगिस्स अपुण्णत्तं, अपुण्णजोगो त्ति णिद्दिट्ठं ॥126॥

❖अर्थ - जिस सयोग-केवली का शरीर पूर्ण है और उसके पर्याप्त नामकर्म का उदय भी मौजूद है तथा काययोग भी है, उनके अपर्याप्तता किस प्रकार हो सकती है ?

❖तो इसका कारण समुद्घात अवस्था में सयोगकेवली के योग का पूर्ण न होना ही बताया है ॥126॥

www.JainKosh.org

सयोग-केवली का शरीर पूर्ण है, पर्याप्त नामकर्म का उदय भी मौजूद है तथा काययोग भी है, उन्हें निर्वृत्ति-अपर्याप्त क्यों कहा जाता है ?

यद्यपि सयोग-केवली अरिहंत भगवान का शरीर पूर्ण है, तथापि केवली-समुद्घात करते हुए कपाट समुद्घात के विस्तार और संकोच के समय उनके औदारिक-मिश्ररूप स्थिति पायी जाती है। उस समय उन्हें निर्वृत्ति-अपर्याप्त कहते हैं।

इसका कारण यहाँ पाये जाने वाले योग हैं। इस स्थिति में जो योग पाये जाते हैं, वे निर्वृत्ति-अपर्याप्त वाले योग होने के कारण उन्हें अपर्याप्त कहते हैं।

लद्धिअपुण्णं मिच्छे, तत्थ वि विदिये चउत्थ-छट्ठे य।
णिव्वत्तिअपज्जत्ती, तत्थ वि सेसेसु पज्जत्ती ॥127॥

- अर्थ - लब्ध्यपर्याप्तक मिथ्यात्व गुणस्थान में ही होते हैं।
- निर्वृत्त्यपर्याप्तक प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ और छठे गुणस्थान में होते हैं।
- पर्याप्तक उक्त चारों और शेष सभी गुणस्थानों में पाये जाते हैं ॥127॥

www.JainKosh.org

पर्याप्त, अपर्याप्त जीवों के गुणस्थान

लब्ध्यपर्याप्तक जीव

- मिथ्यात्व गुणस्थान में

निर्वृत्त्यपर्याप्तक जीव

- प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ और छठे गुणस्थान में

पर्याप्तक जीव

- पहले से चौदहवे गुणस्थान तक

www.JainKosh.org

हेट्ठिमछप्पुढवीणं, जोइसिवणभवणसव्वइत्थीणं।
पुण्णिदरे ण हि सम्मो, ण सासणो णारयापुण्णे ॥128॥

- अर्थ - द्वितीयादिक छह नरक और ज्योतिषी, व्यन्तर, भवनवासी ये तीन प्रकार के देव तथा सम्पूर्ण स्त्रियाँ इनको अपर्याप्त अवस्था में सम्यक्त्व नहीं होता है। और
- नारकियों के निर्वृत्त्यपर्याप्त अवस्था में सासादन गुणस्थान नहीं होता ॥128॥

www.JainKosh.org

निर्वृत्त्यपर्याप्त अवस्था दूसरे व चौथे गुणस्थान में कहा नहीं होती है ?

सासादन गुणस्थान

सातों नरक में

क्योंकि सासादन गुणस्थान सहित मरण करके जीव नरक में पैदा नहीं होता।

अविरत-सम्यक्त्व गुणस्थान

प्रथम नरक बिना छह नरक

ज्योतिषी, व्यंतर, भवनवासी देव

सर्व स्त्री- देवांगना, मनुष्यनी, तिर्यंचनी

इससे सिद्ध हो जाता है कि सम्यक्त्व सहित मरण करके इन अवस्थाओं में सम्यग्दृष्टि उत्पन्न नहीं होता है।

अतीत-पर्याप्ति

छह पर्याप्तियों के अभाव को अतीत-पर्याप्ति कहते हैं ।

सिद्ध भगवान् अतीत-पर्याप्ति हैं ।

www.JainKosh.org

- Reference : गोम्मटसार जीवकाण्ड, सम्यग्ज्ञान चंद्रिका, गोम्मटसार जीवकांड - रेखाचित्र एवं तालिकाओं में

Presentation developed by

Smt. Sarika Vikas Chhabra

- For updates / feedback / suggestions, please contact
  - Sarika Jain, sarikam.j@gmail.com
  - www.jainkosh.org
  - ☎: 94066-82889